लोक परंपरा में बच्चों के लिए प्रचुर साहित्य उपलब्ध है। परंपरा के मौखिक होने की वजह से उसका समुचित संकलन नहीं हुआ है। राजस्थानी लोक साहित्य में सशक्त हस्ताक्षर विजयदान देथा से यह बातचीत लोक में बाल साहित्य के विभिन्न मुद्दों पर केन्द्रित है।

बच्चों के लिए लिखना नहीं आसान

विजयदान देथा से प्रभात, शिवकुमार एवं विश्वंभर की बातचीत

प्रभात : बिज्जी, आपने राजस्थानी लोक कथाओं का संकलन और पुनर्लेखन करके ऐतिहासिक महत्त्व का काम किया है। आपकी 'बातां री फुलवारी' इसका जीवंत दस्तावेज है। इसमें खासतौर से बच्चों के साहित्य को लेकर आपका जो काम है, हम उसके बारे में आपसे जानना समझना चाहते हैं।

बिज्जी : 'बातां री फुलवारी' का दूसरा भाग बाल साहित्य का है। हिन्दी में उसका नाम 'अनोखा पेड़' है और उसका हिन्दी अनुवाद भी मैंने ही घसीटा है। इस भाग की राजस्थानी कथाएं बहुत जबरदस्त हैं। ये सब महिलाओं से सुनकर संकलित की हैं। महिलाओं की मातृभाषा जितनी शुद्ध रहती है और उनके पास जितना शब्द भंडार होता है, जड़ों से जितना उनका जुड़ाव होता है, वैसा पुरुष का नहीं होता। पुरुष तो घूमता है न। बंगाल का कहीं चला गया, बैंगलोर चला गया, महाराष्ट्र चला गया। वे तो वहीं की वहीं, ज्यादातर वहीं की वहीं रहती हैं।

प्रभात : इन कहानियों को लिखे जाने की प्रक्रिया के बारे में थोड़ा बताएं?

बिज्जी : मेरी कहानियों में हर जगह आता है चींटियां मदद कर रही हैं, मछलियां मदद कर रही हैं। उसका जो 'मोटिफ' (अभिप्राय) है, जो लोककथा का ढांचा है, जिस पर लोककथा खड़ी है; उस ढांचे को मैं नहीं तोड़ता। उस पर जो मांस, मज्जा, खून चढ़ाने का काम है वह मैं करता हूं।

प्रभात : 'अनोखा पेड़' कहानी में डायन या भूत-प्रेत बहुत आते हैं। बच्चों की कहानियों में इनके आने को आप कैसे देखते हैं?

बिज्जी : क्या है कि हमें बहुत से शब्द मिलते हैं जैसे कि हमें

ईश्वर शब्द मिला, परमेश्वर मिला, हनुमान मिला, महादेव मिला है। क्या आप जानते हैं कि वे होते हैं? मानने वालों के लिए तो वे होते हैं। उसी प्रकार भाषा के साथ ये परियां, डायन, भूत-प्रेत वगैरह; ये सब रूपक आते हैं। भाषा का हिस्सा हैं ये। मैंने कहीं ऐसा कुछ नहीं कहा है कि डायन या भूत-प्रेत होते हैं।

मेरी कहानी में भूत तो बहुत आते हैं। मैं इन कथाओं को जब लिखने बैठता हूं तो ये चीजें, ये चरित्र आते हैं। सूरज के सोलह घोड़ों का रथ है, यह भी इंसान की कल्पना है और मेरा यह पक्का विचार है कि ईश्वर को आदमी ने बनाया है, आदमी को ईश्वर ने नहीं। ये मेरे विचार हैं।

प्रभात : इसी से जुड़ा हुआ एक और सवाल है। 'अनोखा पेड़' में एक बच्चा एक लड़की को ओखली में कूटकर उसे पका देता है और उसकी मां उसे खा जाती है। यह एक हिंसक दृश्य है। बच्चे के मन पर इसका क्या असर पड़ता होगा?

बिज्जी : फिर मैं बता दूं, ये सारी कथाएं बच्चों की सुनी हुई हैं। बच्चे बार-बार सुनते हैं इन्हें। मेरी फुलवारी के भाग दो के अंदर एक भी कथा ऐसी नहीं है जो मौसी, नानी, दादी अपने बच्चों को नहीं सुनातीं। अरे! आप कितना ही कह लो, यह तो बच्चों की मानसिक भूख है। ये सारी कथाएं सुनी हुई हैं उनकी, उनके सुनाने के लिए ही बनी हैं। उनका सामाजिक आधार ही ये हैं। धीरे-धीरे यह परंपरा भी खत्म हो रही है। एक बात और बता दूं कि ये कथानक मैंने वहीं से सुने हैं लेकिन इनके अंदर मैंने अपने रंग भरे हैं। और दूसरा भाग, मुझे अपने तेरह भागों के अंदर सबसे अच्छा लगता है लेकिन ये मैं दावा नहीं करता कि इसे मैंने बच्चों के लिए लिखा है।

प्रभात : बच्चों की कहानियों में किस तरह की चीजें होनी चाहिएं, किस तरह की नहीं होनी चाहिएं, इस बारे में आपकी क्या मान्यता है?

परिचय : विजयदान देथा

परिचितों में बिज्जी के नाम से पुकारे जाने वाले विजयदान देथा राजस्थानी साहित्य के जाने-माने साहित्यकार हैं। बिज्जी ने राजस्थानी लोक साहित्य का संकलन एवं पुनर्लेखन किया है। साथ ही राजस्थानी भाषा की कहावतों और लोकोक्तियों का संकलन भी किया है।

प्रस्तुति : प्रभात

हिन्दी साहित्य में एम.ए., युवा कवि, वर्तमान में स्वतंत्र लेखनरत, पानियों की गाड़ियों में (बाल कविता संग्रह), विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में कविताएं प्रकाशित।

बिज्जी : देखो, छिपाना तो कुछ नहीं चाहिए, लेकिन यह उम्र के साथ तय होता है। पेंसिल और चश्मा बच्चे को दे सकते हैं, लेकिन समझ के पहले चाकू नहीं दे सकते। चाकू के लिए तो उसे मना करना ही पड़ेगा। कारतूस से भरी हुई पिस्तौल चार-पांच साल के बच्चे से झपट के छीननी ही पड़ेगी आपको। और बच्चा भी तो ऐसे ही शिक्षित होता है। उसकी प्रक्रिया समझो तो कोई परेशानी नहीं है।

शिवकुमार : बिज्जी, उस कहानी में (अनोखा पेड़ में) वह लड़का उस लड़की को ओखली में और उसकी चटनी बनाके...।

बिज्जी : ये सब मोटिफ हैं, इसको अभिप्राय बोलते हैं। मोटिफ दुनिया भर की कहानियों में जो समान चीज होती है उसे कहते हैं। जैसे सारी कारगुजारी छोटा भाई ही करेगा। बड़े चार या पांच भाई हैं लेकिन छोटा भाई ही हमेशा जीतेगा। दुनिया भर के लोक-साहित्य के अंदर ऐसा है। कोई अपनी मर्जी से कहे कि नहीं मैं तो उल्टा लिखूंगा, तो बात अलग है। लेकिन दुनिया भर की परीकथाओं के अंदर मोटिफ होता है।

प्रभात : किसी लोक कथा में जो छोटा भाई है क्या वह किसी चीज का प्रतीक होता है?

बिज्जी : मतलब, छोटा भाई ऐसा करेगा यह मोटिफ है। वह सफलता हासिल करेगा। चार

भाई जहां असफल रहेंगे छोटा भाई सफल होगा, यह मोटिफ है। लोककथाओं के अंदर छोटा भाई ही सफलता प्राप्त करता है और राक्षस हमेशा आदमी से मात खाएगा। कितना भी भयंकर और कितना भी प्रबल और उसकी शक्तियां कितनी भी अपार हों, आखिर के अंदर जीतेगा मानव। वैसे ही जैसे सिंह जंगल का राजा होता है, उसके बारे में भी कथाएं हैं कि उसको खरगोश बेवकूफ बनाकर कुंए में गिराएगा। यह मोटिफ है। इसे ऐसे समझना चाहिए कि यह लोककथा के ढांचे से जुड़ी हुई बात है। इसे लोक का आशावाद भी कहा जा सकता है।

संसार भर में जिन्होंने लोक-साहित्य पर काम किया है, मैं उनकी बात कर रहा हूं। स्टीव थॉमसन ने इस बारे में काम किया है। उसने बताया है कि इस कहानी का यह मोटिफ है। यह मेरी विचारधारा नहीं है। मैंने उसको पढ़कर जाना है। राक्षस चाहे कितना भी शक्तिशाली हो, यह मोटिफ ही है कि अत्याचार का अंत होना सुनिश्चित है। अर्थात् मनुष्य की शक्ति से हजार गुना ज्यादा शक्ति वाला राक्षस आखिर पराजित होता है।

विश्वंभर : यह तो सभी मानते हैं कि साहित्य बच्चों के लिए जरूरी है लेकिन यह बच्चे के विकास में किस तरह योगदान करता है? बच्चे के लिए साहित्य की जरूरत को आप कैसे देखते हैं?

बिज्जी : जरूरत तो है लेकिन उसके लिए लिखे कौन? अब बच्चे तो बच्चों के लिए लिख नहीं सकते। तो फिर बच्चों के लिए लिखे कौन? जानवरों की बातें लिखने से ही बच्चों का साहित्य नहीं बन जाता।

बच्चों के लिए कहानी सुनाने और मनोरंजन करने का काम आजकल टीवी ने ले लिया है। उसी से बच्चे संस्कारित होते हैं। बच्चों के मनोरंजन का बहुत व्यावसायीकरण हो गया है। किसी चीज का व्यावसायीकरण होगा तो चाहे कैसी भी चीज हो उसका सत्यानाश होगा। बाकी यही टीवी है जो दुनिया को चांद के पास पहुंचा सकता है और ठेठ सातवें पाताल तक पहुंचा सकता है। बच्चे की उम्र के समस्त मनोविज्ञान, उसकी रुचि, उसके अनुभव, उसके मानसिक विकास, उसकी उम्र आदि तमाम स्तरों को अच्छी तरह से जान-समझकर लिखना सबसे ज्यादा मुश्किल है। लेखक को यह पता होना चाहिए कि वह बच्चों में भी आखिर किस उम्र के बच्चों के लिए लिख रहा है। बिलकुल शुरुआती स्तर के बच्चों के लिए लिख रहे हैं यानी, चार से छह-सात की उम्र के बच्चों के लिए या सात से दस-ग्यारह की उम्र के बच्चों के लिए या बाहर से पन्द्रह-सोलह यानी किशोरों के लिए। हर उम्र के बच्चों के लिए लिखते समय आपकी रचना में शब्द संख्या, विषयवस्तु आदि सब चीजों में फर्क आ जाएगा।

प्रभात : हिन्दी में बच्चों के लिए लेखन में इस तरह से सोचने और लिखने की समृद्ध परंपरा नहीं रही है?

बिज्जी : आदिवासियों के अंदर सब मौजूद है। छोटे-बड़े सभी नाचते हैं, सभी गाते हैं। कोई सुनता नहीं है। कोई प्रदर्शन करने वाला नहीं है। सभी प्रदर्शनकारी हैं, सभी दर्शक हैं। जो स्त्रियां शादी के गीत गाती हैं।

हिन्दी और उर्दू का हिन्दुस्तान में कहीं भूखण्ड नहीं है। हिन्दी शुरू हुई कहां से और महादेवी, प्रसाद, रामचन्द्र शुक्ल, महावीर प्रसाद द्विवेदी, बच्चन, पंत से होते-होते हम तक आई है। यह सब प्रिटिंग प्रेस की सिखाई हुई भाषा है। वैसी ही स्थिति उर्दू की है। जहां हिन्दी पढ़ाई जाती है वहां के निवासियों की मातृभाषा दूसरी है। इसलिए उन मातृभाषा वालों को तो किसी न किसी रूप में बच्चों के लिए लिखना खुद आवश्यक हो जाता है। अगर बच्चों के लिए कहीं परंपरा है तो यह फेयरी टेल्स, ग्रिम बंधु, एंडरसन की कथाएं, गुलीवर्स ट्रेवल हैं। चीनी भाषा में, रूसी में बच्चों के लिए किताबें हैं। वहां राज्य ने इसकी जिम्मेवारी ले ली है। यहां राज्य ने ऐसी जिम्मेवारी नहीं ली। ऐसे में मातृभाषाओं के साथ उनकी लोककथाएं, परी कथाएं बच्चों के साथ-साथ चलती हैं, उनके प्रति एक संवेदनशील नजरिया रखने की जरूरत है। उस धरोहर को समझने, बचाने और सही तरह से बरतने की जरूरत है और उससे जुड़कर नया लिखने की जरूरत है, अब इतनी मेहनत करे कौन?

प्रभात : लोक कथाओं में ऐसा होता है कि एक ही चीज बार-बार आती है, उसकी पुनरावृत्ति होती है। ऐसा ही आपकी मगरमच्छ और बंदर वाली कहानी में भी है। वही चीज एक ही कथा में पांच-सात बार आती है। क्या यह पुनरावृत्ति ऊबाने वाली नहीं होती?

बिज्जी : लेकिन तुम तो वह उमर पार कर गए हो ना। अब मुझे बताओ कि अगर तुम्हारे सिर पर नमूने के तौर पर तीन ही बाल हों। वे ज्यादा अच्छे लगेंगे कि इसकी कितनी ही पुनरावृत्ति, बालों का जंगल खड़ा हो गया है। तो कभी-कभी बच्चों के लिए पुनरावृत्ति आवश्यक है। पेड़ के एक पत्ते से जमीन पर उसका टिकना संभव नहीं है। कोई बड़ा तूफान आएगा तो वह जड़ से उखड़ जाएगा। जैसे एक उदाहरण देता हूं, जिस दिन सांस की पुनरावृत्ति खत्म हो जाएगी, सब कुछ खत्म हो जाएगा।

जरूरत पड़ती है तो पुनरावृत्ति भी होती है। जैसे गीतों में टेर होती है। उस टेर की पुनरावृत्ति बार-बार आती है और वह अच्छी भी लगती है। अब कहानियों की बात है तो जैसे कुछ कहानियों में पुनरावृत्ति बहुत सुंदर लगती है और कहीं बिलकुल नहीं लगती। वह तो इसके सारे कथ्य, रूपक के अनुरूप और किस तरह से आती है, इस पर निर्भर करता है। और वैसे इसके कहीं भी बने बनाए जवाब नहीं हैं। किसी के पास भी नहीं है। इसके लिए तो खुद ही प्रश्न करोगे और खुद को ही इसका जवाब ढूंढ़ना होगा।

विश्वंभर : आपने जो बात थोड़ी देर पहले कही कि हम छोटे थे तब किताब पैसे देकर लाते थे और खाना खाते हुए ही पढ़ते थे। ऐसी क्या चीज थी जो आपको किताबों को लेकर लुभाती थी?

बिज्जी : अब देखो, मैं बताऊं, प्रवृत्ति आज भी वही की वही है। मैं बच्चों की कहानियों में भी उतनी ही रुचि लेता हूं, जितनी चेखव की कहानियों में लेता हूं। एक अफ्रीकन कथा है, यह पीपुल्स पब्लिकेशन हाउस, मास्को से छपी थी। उसे पढ़कर बहुत आनंद आया। अफ्रीकनों की, आदिवासियों की कथाएं पढ़ते हैं तो उतना ही अच्छा लगता है। मैंने अभी बीस-पच्चीस किताबें दो-ढाई महीने में खत्म की हैं। आदत पड़ी हुई है। मगर पढ़कर नींद नहीं आती है तो फिर किताब होती हैं और इस वजह से नींद में कटौती होती रहती है।

शिवकुमार : बिज्जी, थोड़ा हम इस चीज को भी समझना चाहते हैं कि आज लोक में बाल-साहित्य की स्थिति क्या है? ज्यादातर यह मौखिक परंपरा में है और अब तो कुछ लिखित रूप में भी उपलब्ध है। इसके पीछे जो भावनाएं हैं, उद्देश्य हैं, इन पर थोड़ी चर्चा हो।

बिज्जी : लोक में दो तरह की मौखिक परंपराएं हैं। एक तो जातियों में है और वहां बही लिखने वाले राव होते हैं। वे जब आते हैं तो जातियों को सुनाते हैं, बैठकर आराम से कथाएं कहते हैं और दूसरे बच्चों को सुनाने के लिए औरतें में यह परंपरा जीवित है। अनुसूचित जाति, निम्न वर्ग में यानी जो सवर्ण नहीं हैं, उनके अंदर कहानी सुनाने का बहुत ज्यादा प्रचलन है। मैंने दूसरे भाग में जो कथाएं इकट्ठी की हैं, उनमें से कुछ मेरी जाति में सुनाई जाने वाली कथाएं हैं बाकी अधिकांश कहानियां मेघवाल, जिनको भांभी बोलते हैं, उन्हीं की औरतों से मैंने सुनी हैं। पहले मैंने इन कहानियों में उन औरतों के नाम भी दिए थे। सरवरी, कुसुम, घेवरीबाई, कालीबाई ये सब नाम दिए थे मैंने।

प्रभात : राव किस तरह की कहानियां सुनाते थे?

बिज्जी : उनमें आधे दोहे भी होते थे। पद्य भी होते थे। और कहानी सुनाने का उनका अपना तरीका होता है। इनके लिए अलग से एक शब्द है 'बातपोश' लेकिन हर जाति के राव कुछ न कुछ कथाएं सुनाते ही थे।

प्रभात : लोक कथाओं से किस तरह अलग थी वे कहानियां?

बिज्जी : उसमें पद्य बहुत ज्यादा होता था। वे सुनाते हैं कापड़िया चोर की कथा या पुराने राजा-महाराजाओं की, अमरसिंह राठौड़ की। इस तरह की कथाएं या 'मूमल' के बारे में प्रेमाख्यान सुनाएंगे। पूरा 'ढोला-मारू' उनको जबानी याद होगा, उसमें दोहे वगैरह मौजूद होते हैं। वे ऐसे प्रेमाख्यान वगैरह सब सुनाते हैं। और उनका गद्य भी बड़ा मंजावदार, बड़ा कसा हुआ होता है। उनकी आम बातचीत की भाषा से उनकी 'बातों' की भाषा बिलकुल अलग ही होती है। उनकी बोलने की भाषा अलग होगी और कहानी कहने की भाषा बिलकुल अलग होती है और उसमें पद्य का हिस्सा गद्य से भी ज्यादा होता है। जैसे, कहीं औरत की सुंदरता का वर्णन होगा तो उसमें सुंदरी के बारे मे नाक कैसा है? आंखें कैसी हैं? सिर कैसा है? पगतड़ी कैसी है? अंगुलियां कैसी हैं? इसका खूब वर्णन आता है। वीरता का भी वर्णन खूब आता है। विरह का वर्णन भी खूब आता है। प्रेम का वर्णन भी खूब आता है।

शिवकुमार : क्या आप बताएंगे कि लोकगीत, लोककथाएं या बच्चों के लिए लोककथाएं और बाल गीत किस तरह से लोक की परंपरा में चलते आते हैं? क्या समय के साथ इनमें बदलाव होता है?

बिज्जी : जिस तरीके से भाषा परंपरा से हमको संप्रेषित होती है, गीत और कथाएं भी उसी भाषा का हिस्सा हैं। जिस दिन बच्चा पैदा होता है, औरतें जच्चा-बच्चा के गीत गाती हैं, जब वे ससुराल जाती हैं, दामाद आता है, दामाद और समधी के लिए गालियां गाती हैं। वह सब परंपरागत रूप से उनके साथ बैठते-बैठते आता है। अकेले तो गाती नहीं है। छह-सात या ज्यादा औरतें होती हैं। सब औरतें साथ-साथ गाती हैं। औरतें कैसे सीखती हैं, कोई सिखाने वाला तो होता नहीं है, कोई इनका प्रशिक्षक नहीं होता। फिर भी सीखती हैं। कथाएं और गीत तो पुरुषों के पास भी होते हैं लेकिन वे औरतों की कथाओं और गीतों से बिलकुल अलग होते हैं। पुरुषों के लिए जैसे कि तेजाजी की गाथा होती है। चौमासे के अंदर पुरुष मिलकर वीर तेजाजी गाते हैं। लेकिन जो शादी के गीत हैं या अनुष्ठानिक गीत होते हैं उन्हें पुरुष कभी नहीं गाते।

इस तरह हम देखते हैं कि परंपरा में साहित्य के बहुत सारे रूप मिलते हैं। उसी में बच्चों के साहित्य की भी अपनी जगह है। चाहे वे बच्चों के लिए सुनाई जाने वाली लोक कथाएं हों, चाहे बच्चों की तुकबंदियों वाले बालगीत हों, चाहे पहेलियां आदि हों। यह सब पीढ़ी दर पीढ़ी चला आता है। समय के अनुरूप इनमें भाषागत तथा अन्य बदलाव स्वाभाविक रूप से आते रहते हैं।

विश्वंभर : लोक कथाएं, बच्चों की कथाएं बहुत पहले से चलती आ रही हैं। क्या ये सिर्फ बच्चों के लिए मनोरंजन का जरिए के तौर पर चलती हैं या लोक में बच्चों को इनके जरिए अनकहे किसी और तरह से सक्षम बनाने का मामला भी होता है?

बिज्जी : ये बच्चों के लिए मतलब... अगर अतिरंजना करके कहूं तो परियों, राजा-महाराजाओं, भूत-प्रतों की कथाएं सुनना, मेरे खयाल से बच्चे के लिए दुग्धपान/स्तनपान की तरह से एक मानसिक जरूरत है और उसका अर्थ भी होता है और इसमें वे जो आनंद लेते हैं उसे खोलकर बताना तो मुश्किल है लेकिन निश्चित ही वे इसका आनंद लेते हैं। वे अपने तरीके से दूर के चन्द्रमा को भी हाथ से पकड़ना चाहते हैं। वयस्क जो आनंद लेते हैं वह बिलकुल दूसरी तरह का है। उनकी रुचि बिलकुल दूसरी है।

इनसे भाषा तो संप्रेषित होती ही है लेकिन भाषा संप्रेषित होने से उनका जो विकास होता है वह महत्त्वपूर्ण है। इससे उनकी भाषा का विकास होता है और भाषा विकास के साथ-साथ उनमें दुनिया को देखने-समझने की क्षमता, सोचना-विचारना, प्रतिक्रिया करना, ग्रहण करना, नकारना, निर्णय लेना; यह सब उसके मनुष्य से इंसान बनने की प्रक्रिया है और इसमें यह जो लोककथाएं और गीत होते हैं, इनकी महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है।

विश्वंभर : बिज्जी, लोक में जो कहानियां और गीत हैं वे हमारे समाज के मूल्यों, मान्यताओं, रीतियों को संप्रेषित करते हैं और इसके जरिए बच्चों का एक तरह का सामाजीकरण और सीखना चलता रहता है।

बिज्जी : इतना तो नहीं है। चार-पांच साल की उमर तक मान्यता, संस्कार वगैरह कितने सीखते हैं, यह कहना तो मुश्किल है। हालांकि आठ, दस, बारह साल के बाद यह जरूर होने लगता है। शुरुआत में तो सिर्फ रंजन होता है लेकिन आगे चलकर तुम जो कह रहे हो वह ठीक है कि इनके जरिए सामाजिक मूल्यों, मान्यताओं, रीतियों आदि की समझ भी उनमें विकसित होती है।

विश्वंभर : इसमें एक सवाल यह भी है कि ऐसी कई कहानियां हैं जिसमें एक व्यक्ति भला कर रहा है तो उसके साथ भला हो रहा है, जो बुरा कर रहा है उसके साथ बुरा हो रहा है। लेकिन यथार्थ में तो ऐसा दिखाई नहीं देता। वास्तविक दुनिया में तो ऐसा होता नहीं है। वास्तविक दुनिया में तो बड़ी पेचीदगियों के साथ जीवन चलता है।

बिज्जी : उन पेचीदगियों को तो आधुनिक कहानीकार अपने हिसाब से सुलझाते हैं। अब सुलझती हैं या नहीं यह अलग बात है लेकिन वे चेष्टा तो करते हैं।

विश्वंभर : इसका मतलब है कि आधुनिक और लोक-साहित्य में एक खास बुनियादी फर्क है? लोक-साहित्य एक तरीके से चलता है, यानी इसके चरित्रों और कथानक में सरलता है और आधुनिक कहानी एक तरह की जटिलता के साथ चलती है। ऐसा लोक-साहित्य में क्यों है?

बिज्जी : भई, लोक-साहित्य में तो इसलिए है कि कल ही मैं आपको बता रहा था कि लोककथाओं का प्रमुख ध्येय है आदमी की विभिन्नता के बीच उसकी समानता खोजना। तमाम विभिन्नताओं के बाद आदमी कहीं न कहीं समान हैं। लोककथाएं समानता की ओर बढ़ती हैं, उसी को संप्रेषित करती हैं। आधुनिक लेखक समान होते हुए भी कहीं न कहीं भिन्नता को, अर्थात् इंसान में भिन्नता कहां है, उसकी तलाश करता है।

विश्वंभर : बहुत से लोग लोककथाओं के संदर्भ में यह कहते हैं कि इनमें राजा-रानियों की उपस्थिति अभी भी उसी सामंती ढांचे को बनाए हुए है?

बिज्जी : नहीं, नहीं! पहले राजा शब्द बड़ा सम्मान सूचक था। अब जो आधा पागल आदमी होता है न उसको भी 'राजा-आदमी' बोलते हैं। शब्दों का भंडार कम नहीं पड़ता है, उसके अर्थ बदलते रहते हैं। अब कहते हैं राजा आदमी है, माने आधा पागल है। लेकिन सामंती व्यवस्था में तो ऐसा नहीं कह सकते थे। तो शब्दों के अर्थ बदलते रहते हैं। हर विषय क्षेत्र के अंदर वे ही सामाजिक शब्द हैं। उनका मनोविज्ञान में अर्थ बिलकुल दूसरा है। अर्थशास्त्र में बिलकुल दूसरा है। शारीरिक शास्त्र में बिलकुल दूसरा है लेकिन शब्द तो वे ही हैं। अब जैसे 'मैमोरी' शब्द है। मैमोरी सिर्फ आदमी की स्मृति के लिए काम आता था। अब तुम्हारे कम्प्यूटर के लिए, मोबाइल के लिए काम आने लग गया है। हम मैमोरी इंसानी दिमाग की एक

चेतन अवस्था में किन्हीं चीजों के याद होने को कहते हैं। उसे यांत्रिक तरीके से भी याद किया जा सकता है और कम्प्यूटर की मैमोरी इसका एक उदाहरण है। उसके बाद स्वयं जब तक उसे चलाने का तरीका नहीं आएगा मैमोरी आएगी नहीं।

विश्वंभर : आप कह रहे हैं संदर्भ के साथ शब्द का अलग अर्थ हो जाता है लेकिन जैसे कुछ लोककथाएं ऐसी हैं जैसे एक राजा था उसकी सात रानियां थीं। आज के समय में तो ऐसी चीजें संभव नहीं हैं और इसे निहायत ही अवमाननापूर्ण माना जाएगा।

बिज्जी : देखिए, ये शिक्षित लोगों का सोचना है, ऐसा कुछ भी नहीं है। बिलकुल नहीं है। रजवाड़े तो खत्म हो गए लेकिन राजा-रानी शब्द तो खत्म नहीं होंगे। ठाकुर शब्द तो खत्म नहीं होगा। प्रजा शब्द तो खत्म नहीं होगा। ये तो रहेंगे इनके उपयोग थोड़े-थोड़े होते-होते बदलते रहेंगे।

विश्वंभर : एक सवाल यह था कि हर जगह का भूगोल और इतिहास अलग है तो क्या उसके हिसाब से लोक-साहित्य में भी किसी तरह के फर्क आते हैं?

बिज्जी : ऐसा है कि एक होती है साझा कला (कलेक्टिव आर्ट)। दुनियाभर के अंदर एक मानवीय समानता होती है, वह सब समाजों में होती है। वह उपमाओं में रहती है, कथाओं में रहती है, अभिप्राय में रहती है। यह समानता सब जगह रहती है और जिस तरह राजस्थान में अलग-अलग क्षेत्र की भाषाएं अलग-अलग हैं जैसे हाड़ौती की अलग है, मेवाड़ की अलग है, शेखावटी की अलग है लेकिन आश्चर्य है कि लोकगीतों के अंदर बहुत किंचित, नगण्य-सा फर्क है। सारे राजस्थान में लोकगीतों में फर्क नहीं है।

इतिहास शब्द एक है, दृष्टि बदलती रही है। पहले इतिहास का यही मतलब था कि राजा-रानियों की ख्यात, किसने कब तक शासन किया, कब मर गया, कहां लड़ाई में जीते। अब तो लोग इतिहास ढूंढ़ के ला रहे हैं। इतिहास सिर्फ वही नहीं जो अंग्रेजों के खिलाफ लड़ा गया है। गदर के अलावा जो भील और आदिवासी लड़े हैं, उनके वर्णन, जो समाज में निम्न समझे जाते हैं, उनका भी एक तरीके का इतिहास है। तो इतिहास के तो दृष्टिकोण बदलते रहते हैं।

विश्वंभर : क्या हम लोक-साहित्य में इस समानता और स्थानीय भेद को दर्शाने वाली चीजें देख सकते हैं? ऐसी कौन-सी चीजें हैं जो यहां के लोक-साहित्य की खास विशेषताएं हैं?

बिज्जी : देखिए, पंजाब, राजस्थान, गुजरात और हरियाणा एक-दूसरे के नजदीकी प्रान्त हैं। प्रांतों की सीमाओं के बावजूद सिवाय लिपि के राजस्थान और गुजरात के गीत अस्सी फीसदी समान हैं।

प्रभात : लोक में बाल-साहित्य के भविष्य को आप कैसा देखते हैं?

बिज्जी : देखो, अब मीडिया के चलते, अपने देखते-देखते कितना फर्क पड़ गया है। मोबाइल के अंदर भी कुछ फिल्में, कुछ खेल, कुछ क्रिकेट आदि आ जाते हैं। संचार के इन माध्यमों से बच्चा दस-पन्द्रह-बीस साल के अंदर कैसा बनेगा, मैं उसकी भविष्यवाणी नहीं कर सकता लेकिन निश्चित रूप से आज जो कुछ भी मौजूद है, वह कल मौजूद नहीं रहेगा। वह उन समाजों के अंदर बचा रहेगा जहां ये संचार के साधन या मीडिया नहीं पहुंचा है। कुछ ऐसे लोग रह जाएंगे जो इसको म्यूजियम की तरह संग्रह करके रखेंगे। धीरे-धीरे इसका क्षरण ही होगा संचार माध्यमों के साथ और शिक्षा के साथ।

प्रभात : क्या ये स्वरूप न रह करके कोई और स्वरूप उभरेगा?

बिज्जी : ये बदला हुआ स्वरूप तो आपके सामने 'रोबट और तितली' के रूप में सामने ही है ना। उसकी शैली लोककथा की है लेकिन कथानक लोककथा का नहीं है। शैली मौजूद रह सकती है।

एक किताब है, 'सुनो कहानी बिटिया रानी'। यह हिन्दी में अनुदित है। लेखक का नाम याद नहीं आ रहा है। उसमें सारी कहानियां ऐसी हैं। और फिर मेरी मान्यता तो यह है कि जो पंचतंत्र का फॉर्म है, कथा से आगे कथा जुड़ती जाती है और पशु-पक्षियों के नाम हैं, वे तो निमित्त मात्र हैं। इसकी शुरुआत ही ऐसे हुई थी कि एक राजा के, आप जानते होंगे, पांच-छह राजकुमार अनपढ़ रह गए थे। तब विष्णु शर्मा नाम के एक व्यक्ति को उन्हें शिक्षित करने के लिए बुलाया गया। उसकी उम्र उस वक्त काफी हो गई थी। राजा ने कहा कि मैं तुमको पांच सौ गांव दूंगा। उसने कहा कि यह बहुत बड़ा प्रलोभन है लेकिन मैं जिस आयु के किनारे पहुंचा हूं उसके लिए प्रलोभन मायने नहीं रखता और मैं मानता हूं कि यदि मैंने आपके लड़कों को आपके अनुसार राजनीति में पारंगत कर दिया तो मुझे कुछ नहीं चाहिए और न कर सकूं तो मुझे आम-सूली का दण्ड मिले। और जो कथा पंचतंत्र की है, आज दिन तक उसके जैसे फॉर्म में विश्व का कथा साहित्य नहीं पहुंचा है, जहां पंचतंत्र पहुंच चुका। मनुष्य की कोई समस्या ऐसी नहीं है जो

इस पंचतंत्र में नहीं है। मनुष्य संबंधी हर बात का, लोभ का, लालच का, उदारता का, जितनी भी इंसानी प्रवृत्तियां होती हैं वे इन कहानियों में हैं। एक कहानी के अंदर एक पक्षी के दो मुंह होते हैं। एक मुंह से तो उसने फल खा लिया दूसरे ने कहा मेरे हिस्से में नहीं आया। वह जहरीला फल खा जाता है और वह मर जाता है। इनके अर्थ ढूंढ़ने में भी सदियां लग जाएंगी कि इसका क्या अर्थ है?

मनुष्य की जो प्रवृत्तियां हैं और जो आज भी मौजूद हैं, इन कहानियों में यह उनका रूपक है। बरसों के बाद हजार बरसों के बाद भी ये कायम हैं। अतः लोक की जो मूल प्रवृत्तियां होती हैं, ये कहानियां उन प्रवृत्तियों पर हैं। वे मिटती नहीं हैं। उनका परिष्कार हो सकता है।

एक ही कहानी सौ आदमियों को अलग-अलग तरह से प्रभावित करती है। वह एक तरह से सबको प्रभावित नहीं करती। उसका अनुभव, उसकी मर्मज्ञता, उसका ज्ञान उसकी पढाई, उसकी रुचि सब शामिल होता है इस प्रभाव को ग्रहण करने में। शरत बाबू की 'सुमति' और चेखव की 'डार्लिंग' कहानी, मैंने दो-दो सौ दफे पढ़ी हैं। दो सौ दफे वही कहानी नहीं पढ़ी जो छपी हुई है। हर वक्त लगता है कि उसके नए आयाम खुलते जा रहे हैं, ऐसा लगता है यह तो पहली बार ही समझ में आई है।

पंचतंत्र में पशु-पक्षियों के जो नामकरण हैं उसकी कल्पना तक नहीं की जा सकती, वैसे नाम हैं उनके। ईसप की कथाएं तो पंचतंत्र से भी पहले की हैं। उनमें जिस वक्त जिन रूपकों को चुना गया होगा उस वक्त इंसान को ध्यान में रखा होगा। ईसप की बोध-कथाओं ने पशु-पक्षियों के माध्यम से इंसान को ही व्याख्यायित किया है। वहां ज्यादा विश्लेषित होता है आदमी, उससे ज्यादा सामने आता है। कभी-कभी तो यह सत्य को सीधे प्रेषित करती हैं। कभी-कभी सीधी सामान्य आकृति भी इस तरह प्रेषित नहीं करती। इसीलिए फोटोग्राफ से कार्टून क्यों ज्यादा प्रेषित करते हैं, जैसे उनमें आधा इंच की नाक सब कुछ प्रेषित कर देती है।

जितनी भी पुरानी कथाएं हैं, वक्त के साथ-साथ बदलती रहती हैं। महाभारत के पात्रों के भी अपने विश्लेषण हो रहे हैं। महाभारत एक है उसके पात्रों की व्याख्या वगैरह सब बदलती रहती है। इसलिए कृति एक नहीं रहती।

विश्वंभर : आपकी बातां री फुलवारी भाग दो और पंचतंत्र की कथाओं के पात्र पशु-पक्षी हैं, जीव-जंतु हैं। बच्चों के लिए क्या इस तरह साहित्य लिखने का कोई खास उद्देश्य होता है?

बिज्जी : ये पात्र बच्चे की रुचि को कहीं न कहीं रंजित करते ही हैं। बच्चों के अंदर गिलहरी, तितली आदि के प्रति एक ललक रहती है। कौआ जो बोलता है उसे हम अनदेखा-अनसुना कर सकते हैं, बच्चा नहीं कर सकता। उसको यह आनंद देता है। हम एक रट के अंदर पड़ जाते हैं जो कुछ असर नहीं करती। एक आधुनिक अमेरीकी कहानी है, लेखक का नाम भूल गया हूं, उसने लिखा कि एक व्यक्ति सूरज को देखकर पागल-सा हो जाता है। अरे! देखो, सूरज निकल रहा है। गाड़ी चली जाती है... किसी को इनकी परवाह नहीं। वह कहता है, अरे! देखो कैसा आश्चर्यजनक सूरज है! इस कहानी ने मुझे बहुत जबरदस्त प्रभावित किया।

बच्चे जो संग्रह करते हैं, उनकी संग्रह की हुई चीजों का आपके लिए तो दो कोड़ी का भी मूल्य नहीं है। लेकिन बच्चे का तो वह खजाना है। वह पत्थर और मोर पंख और न जाने किन-किन चीजों को अमूल्य मानता है। और जब तक उसकी बुद्धि व्यावसायिक बुद्धि न हो जाए और वह पैसे को सबसे ज्यादा मूल्यवान नहीं समझने लगे तब तक वह उन्हें आपको नहीं देगा।

प्रभात : अब एक कहानी आपसे सुनना चाहते हैं...।

बिज्जी : यहां पे रहंट चलता है पानी का। एक सवार ने रहंट की आवाज सुनी तो घोड़े को पानी पिलाने के लिए उधर ही मुड़ा। वो लकड़ी घूमती है रंहट की खट-खट-खट, पानी खल-खल-खल बोलता है। पनड़ी की खड़िंद-खड़िंद से घोड़ी बिदक रही थी। सवार ने कुंआ चलाने वाले को रौब गांठते हुए कहा, ''अरे! ऐ गंवार, ये तेरी खटपट बंद कर मेरी घोड़ी पानी नहीं पीती।'' तो उसने कहा कि खटपट बंद हो जाएगी तो पानी भी बंद हो जाएगा। जब तक खटपट है तभी तक पानी है। यानी सब तरह के विघ्न के बाद भी आपको अपनी एकाग्रता कायम रखनी है।

प्रभात : खटपट की साधना।

बिज्जी : हां, पानी पिलाना है तो खटपट में पिला लो। जो खटपट नहीं है तो पानी भी नहीं है। ◆